P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-11*(Part-1) February 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

भारत में चुनाव सुधार : चुनौतियाँ एवं विकल्प

दिग्विजय नाथ पाण्डेय
एसोसिएट प्रोफेसर,
राजनीति विज्ञान विभाग,
एच.आर.पी.जी. कालेज,
खलीलाबाद, संतकबीर नगर

सारांश

भारत ने औपनिवेशिक शासन से स्वत्रंत्र होने के पश्चात लोकतान्त्रिक शासन व्यवस्था, संसदीय शासन और प्रतिनिधिक विधायी संस्थाओं को स्वीकार किया। इसका अर्थ यह नहीं था भारत में ब्रिटिश संस्थाओं का पौधा रोपा जा रहा था। वास्तव में ये संस्थायें औपनिवेशिक संस्थायें थी, उनका भारत की विशेष परिस्थितियों में विकास हुआ था, और एक खास रूप था। आज हम जिन संसदीय संस्थाओं से परिचित है उनका स्वतंत्रता के विभिन्न चरणों में भारत की भूमि पर सहज भाव से उत्कर्ष हुआ था। लोकतंत्रात्मक शासन प्रणाली के सभी रूपों के मूल में लोक–प्रभुसत्ता का सिद्धान्त है।[1] हमने प्रतिनिधिक संसदीय लोकतंत्र की प्रणाली को इसलिए अपनाया क्योंकि वह हमारे नैतिक सिद्धान्तों और आवश्यकताओं के अनुकूल थी देश की स्वतंत्रता के बाद सबसे बड़ी क्रान्ति यह थी की लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं के निर्वाचनों के सार्वभौम व्यस्क मताधिकार को स्वीकार किया गया। भयंकर पिछड़ेपन, गरीबी और व्यापक अशिक्षा के बावजूद संविधान के निर्मिताओं ने सभी नागरिकों को मताधिकार प्रदान किया। मूल संविधान में मतदान की न्यूनतम आयु 21 वर्ष थी। बाद में उसे घटाकर 18 वर्ष कर दिया गया।

मुख्य शब्द : प्रतिनिधित्व, मताधिकार, निर्वाचक नामावली, धनवान।

प्रस्तावना

संसदीय लोकतंत्र की सफलता के लिए यह आवश्यक शर्त है कि नियतकालिक चुनाव स्वतंत्र एवं निष्पक्ष हो। संविधान के निर्मिताओं को उम्मीद थी कि सार्वभौम, व्यस्क मताधिकार के द्वारा लोकप्रतिनिधियों को निर्वाचित करेंगे। जो वास्तव में उनका प्रतिनिधित्व करेंगे, उनकीं आवश्यकताओं एवं आकंक्षाओं को पूरा करेंगे।

संविधान में अनुच्छेद 324 द्वारा संसद और प्रत्येक राज्य के विधान मंडल के लिए कराये जाने वाले सभी निर्वाचनों के लिए तथा राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के पदों के निर्वाचनों के लिए निर्वाचक नियमावली तैयार कराने का और सभी निर्वाचनों के संचालन का अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण का दायित्व एक स्वतंत्र निर्वाचन आयोग को सौपा है। अनुच्छेद 327 के अनुसार संसद समय–समय पर विधि द्वारा संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान मंडल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए निर्वाचनों से सम्बन्धित या संसक्त सभी विषयों के सम्बन्ध में जिसके अन्तर्गत निर्वाचक–नामावली तैयार कराना निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन और ऐसे सदन या सदनों का सम्यक गठन सुनिश्चित करने के लिए अन्य सभी आवश्यक विषय है, उपबन्ध कर सकती है। निर्वाचन आयोग निर्वाचन की तारीखें तय करता है वह विधि और व्यवस्था के आधार पर निर्वाचनों को अनिश्चित काल के लिए नहीं टाल सकता। आयोग का काम निर्वाचन कराना है, उन्हें रोकना नहीं।[2]

डबलू.जे.मैंकेंजी ने स्वतंत्र चुनाव और चुनावी व्यवस्था के सफलता पूर्वक कार्य करने के चार शर्ते रखी हैं जो निम्नलिखित हैः

चुनाव कानून की व्याख्या के लिए स्वतंत्रत न्यायपालिका, चुनाव के संचालन के लिए ईमानदार, सक्षम और निष्पक्ष प्रशासन, राजनीतिक दलों की एक विकसित व्यवस्था, जो समुचित ढंग से संगठित हो और जो अपनी नीतियों, परम्परा और उम्मीदवारों की टीम को मतदाताओं के सामने चुनने के लिए विकल्प के रूप में रख सकें। और पूरे राजनीतिक समुदाय द्वारा इस राजनीतिक खे के कुछ राजनीतिक तौर तरीको जो भले ही अस्पष्ट हो कि आम स्वीकृति जो सत्ता के लिए संघर्ष को सीमित करते हों जिसका कारण कुछ अनकही संवेदनात्मक समझ है कि इन्हें मोंटे तौर पर विश्वास के साथ नहीं माना गया है कि तो पूरी व्यवस्था को ध्वस्त होने के कारण खेल खत्म हो जाएगा।[3] कोई भी विकासशील देश इन शर्तो को पूरी तरह अपनाने का दावा नहीं कर सकता, फिर भी औरो की तुलना में भारत इन्हें पूरा करने के करीब है कुछ हदतक विचलित

होने के बावजूद यह एक स्वतंत्र न्याय प्रणाली और निष्पक्ष चुनावी प्रशासन का दावा कर सकता है, फिर भी कुछ नियमों की आम स्वीकृति है जो समय के साथ परिपक्व हो रही हैः 16वीं लोकसभा (2014) के आम चुनाव ने इसकी पुष्टि की है। मतदाताओं की संख्या में उत्तरोत्तर, वृद्धि के साथ–साथ मतदान प्रतिशत भी बढ़ा है। जिसका कारण यह विश्वास है कि चुनाव से अंतर पड़ता है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य भारत में लोकतांत्रिक चुनाव प्रक्रिया में सुधार पर जार देना है। किसी भी लोकतंत्र के लिए निष्पक्ष परदर्शी, नियमित चुनाव होना उसकी सफलता के लिए आवश्यक है। इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन द्वारा चुनाव कराना राजनीतिक दलों के बावजूद एक निष्पक्ष प्रक्रिया है। निर्वाचन आयोग ने समय–समय पर चुनाव प्रक्रिया की निष्पक्षता के लिए अनेक कदम उठाये हैं। अभी भी धनबल एवं बाहुबल के प्रभाव को रोकने के लिए अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है।

विषयवस्तु

यह स्पष्ट स्थापित हो चुका है कि चुनाव ने भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में केन्द्रीय स्थान ग्रहण कर लिया है वे सिर्फ ''महत्त्वपूर्ण राजनीतिक घटनाओं से बढ़कर ही नहीं ''बल्कि करोड़ों[4] लोगों के लिए राष्ट्रीय समारोह या तमाशा, मनोरंजन के साधन, शिक्षा और उत्साह के साधन है। अभियान जीवन्त और रंग–बिरंगे होते है या तीव्र राजनीतिक वहसों, प्रतिकात्मक जलूसों या यात्राओं और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के बढ़ते हुए इस्तेमाल जिनमें प्रमुख दलों द्वारा ऑडियों और वीडियो कैसेटों, रेडियो एवं टी0वी0 प्रसारण एवं अन्य इलेक्ट्रॉनिक साधन है, की प्रमुखता होती है। भारत में विस्तृत रूप में निरक्षरता के कारण मतदाता लोग प्रत्याशी की पहचान उनको दिए गये चिन्हों के सहारे करते हैं, और इसलिए चित्र के रूप में संकेतों का अधिक महत्व है। कई बार नारों के रूप में समस्यायें निर्णायक हो जाती हैं। इसके उदाहरण के रूप में 1971 के ''गरीबी हटाओं'' 1977 के ''इंदिरा हटाओं'', 1980 में ''इंदिरा लाओ देश बचाओ'' 1989 के ''भ्रष्टाचार का मतलब बोफोर्स'' और 1996 के ''हवाला का बोलबाला'' इत्यादि को पेश किया जा सकता है। अभियान के दौरान सभी पार्टियों द्वारा बेरोजगारी का उन्मूलन, भ्रष्टाचार से मुकाबला, राष्ट्रीय एकता की सुरक्षा, इत्यादि जैसी–नीतिगत मसलों पर तीव्र बहसें होती है। जनता निरपेक्ष भाव से चुनावों के आगमन का स्वागत करती है और उन्हें अति महत्वपूर्ण समारोह के रूप में मानती है उनके फैसलो के विवेक ने घोर आलोचकों को भी हक्का–बक्का कर दिया है और चुनाव के परिणामों ने 1971 में मॉरिस जोन्स के द्वारा कही गई निम्नलिखित बातों की पुष्टि कर दी हैः चुनाव उन ''कई चीजो में से एक है जिसमें भारतीय अच्छा करते है।[5] यह आश्चर्य की बात है कि गरीबी और निरक्षरता के बावजूद जनता ने अपने स्वाभाविक बुद्धि और आत्म ज्ञान के द्वारा चुनाव करने और साथ ही अपनी पसंद के अनुसार सरकार के बदलने में निर्णय की परिपक्वता का प्रदर्शन किया है।

समस्याएं

आज भारतीय लोकतंत्र को अनेको चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है जिससे चुनावी प्रक्रिया दूषित हो रही है– ये चुनौतियाँ है– अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, जातिवाद और सम्प्रदायिकता। धनबल, बाहुबल और माफियाओं ने हमारी राजनीति को दूषित कर रखा है। संविधान के कार्यकरण की समीक्षा के लिए गठित राष्ट्रीय आयोग ने निर्वाचन विधियों और प्रक्रियाओं के क्षेत्र में निम्नलिखित समस्याओं पर दृष्टिपात किया है–

1. निर्वाचन पर बढ़ता हुआ खर्च। इससे अनेक समस्यायें उत्पन्न हुई है अनैतिक एवं अवैध प्रथाओं का विकास हुआ है। माफिया की शक्ति बढ़ी है। भ्रष्टाचार, काले धन और अपराधीकरण ने राजनीति की काया में प्रवेश कर लिया है।
2. पंचायत स्तर से लोकसभा स्तर तक प्रत्यक्ष रीति से निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए मतदाता। निर्वाचन एक ही है। ये मतदाता। निर्वाचक अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों से सभी तरह के कामों की उम्मीद करते है उदाहरण के लिए वे संघीय संसद के सदस्यों से भी यह उम्मीद उखते है कि वे स्थानीय समस्याओं को सुलझाएँ।
3. निर्वाचकों का उम्मीदवारों के चयन में कोई हाथ नहीं होता। अधिकांश उम्मीदवार कुल डाले गये मतों के आधे से कम मतों से निर्वाचित होते है। इस स्थिति में प्रतिनिधियों का प्रतिनिधिक स्वरूप सन्देहास्पद हो जाता है। निर्वाचनों में अनेक राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों विशेषकर निर्दलीय उम्मीदवारों की उपस्थिति ने स्थिति को विषय बना दिया है।
4. दल–बदल एवं दसवीं अनुसूची का प्रश्न।
5. निर्वाचक नामावलियों तथा मतदाताओं के पहचान–पत्रों में गलतियाँ रह जाती है। इससे मतदान में बेईमानी होती है और बहुत से नागरिक मतदान के अधिकार का प्रयोग नहीं कर पाते।
6. मतदान में हिंसा। मतदाताओं को डराना–धमाकना। बहुत से मतदाताओं के डर के कारण मतदान में भाग न लेना। सरकारी अफसरों और स्थानीय प्रशासन का निर्वाचनों में हस्तक्षेप जिससे निर्वाचन प्रक्रिया में अनेक विकृतियाँ आ गई है।
7. मतगणना में जानबूझकर गलतियाँ करना।
8. निर्वाचन प्रक्रिया का अपराधीकरण। बहुत से अपराधी तत्वों का चुनावों में भाग लेना।
9. विभाजनकारी तत्त्वों का बढ़ता हुआ महत्त्व। विचार धाराओं को तिलांजलि। धर्म और जाति के नाम पर मतदाताओं को प्रभावित करना।
10. न्यायपालिका द्वारा निर्वाचन याचिकाओं को निपटाने में देरी।
11. निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन में विसंगतियाँ जिसके परिणाम स्वरूप प्रतिनिधित्व पर्याप्त मात्रा में नहीं हो पाता।
12. राजनीतिक नैतिकता के मानकों में गिरावट आ जाने और सार्वजनिक जीवन में त्याग एवं सेवा की भावना के कम हो जाने के कारण व्यवस्था की वैधता के प्रति विश्वास–भंग होना।[6]

निष्कर्ष

भारत में चुनाव तंत्र और चुनावी प्रक्रिया में सुधार की आवश्यकता बहुत पहले ही महसूस की गई थी। इस दिशा में विरोधी दलों, विभिन्न समितियों, इसके लिए नियुक्त आयोगों वकीलों, जजों और इससे सम्बन्धित विद्वानों द्वारा कोशिश की जा चुकी है। चुनाव सुधार के लिए इस तरह की पहली चिन्ता पहली बार 1971 में प्रकट की गई जब लोक सभा और राज्य सभा के द्वारा क्रमशः 22 जून और 25 जून 1975 को स्वीकार किये गये प्रस्तावों के परिणाम स्वरूप चुनावी संशोधन के लिए संयुक्त संसदीय समिति की नियुक्ति की गई। जगन्नाथ राव की अध्यक्षता में इस समिति ने 1972 में अपनी रिपोर्ट पेश की। उक्त रिपोर्ट दो भागों में थी। भाग 1 में जनप्रतिधित्व कानून 1950 और 1951 में संशोधन की व्यवस्था थी जबकि भाग 2 में मतदान करने की आयु सीमा, चुनावी व्यवस्था थी जबकि भाग 2 में मतदान करने की आयु सीमा, चुनावी व्यवस्था इत्यादि की चर्चा थी। सुधारों के द्वारा ''कुछ विसंगतियों को हटाया''[7] जा सकता था, लेकिन उन्हें लागू नहीं किया जा सका।

1974 में ''प्रजातंत्र के लिए नागरिक'' के अध्यक्ष के रूप में जयप्रकाश नारायण ने न्यायधीश वी0एम0 तारकुंडे की अध्यक्षता में समिति बनायी। इस समिति का कार्य धन का इस्तेमाल, सरकारी तंत्र का दुरूपयोग, लोकप्रिय मतों के बीच असमानता और वर्तमान चुनावी व्यवस्था के अन्तर्गत सीटों की संख्या, वर्तमान कानून एवं प्रशासन में खामी, इत्यादि जैसे विभिन्न प्रकार के भ्रष्टाचार के उन्मूलन के लिए चुनावी सुधार के कार्यक्रम पर अध्ययन कर रिपोर्ट देना था। तारकुंडे समिति ने फरवरी 1975 में अपनी रिपोर्ट सौपी। इस रिपोर्ट के आधार पर जय प्रकाश नारायण ने भ्रष्टाचार के विरूद्ध एवं चुनावी सुधार के लिए पहला जन आंदोलन छेड़ा। चुनाव सुधारों पर संयुक्त संसदीय समिति की सर्वसम्मत सिफारिशों को अविलम्ब लागू किये जाने की माँग की।[8] लेकिन इसके पश्चात ही आपातकाल की घोषणा कर दी गई और चुनावी कानूनों में जो संशोधन किया गया उसमें सुधार होने के बजाय व्यवस्था को विकृत करने का प्रयास किया गया। 1977 में जनता सरकार के गठन के पश्चात पहली बार राष्ट्रीय एवं राज्य की पार्टियों को राज्यों के विधान सभा चुनावों के दौरान रेडियों और टेलिविजन पर संदेश देने के लिए समय दिया गया। चुनाव सुधारों के लिए जनता सरकार ने संविधान का (44वाँ) संशोधन विधेयक पास किया। एक मंत्रिमंडल की उप समिति तत्कालीन गृहमंत्री चौ0 चरण सिंह की अध्यक्षता में गठित हुई, जिसका काम चुनावी सुधार के प्रस्ताव पर विचार करना था। तत्कालीन मुख्य चुनाव आयुक्त एस.एल. शकधर ने चुनावी खर्चो से लेकर मतदान केन्द्रों पर कब्जा करने तक के विभिन्न मामलो पर महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये।[9] मतदान करने की उम्र को 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष करने पर सहमति हो गई। लेकिन इससे पहले कि वह कोई चुनावी सुधार की पहल कर सके जनता पार्टी की सरकार को त्यागपत्र देना पड़ा। 1990 में वी.पी. सिंह के नेतृत्व में राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार गठित हुई। तत्कालीन कानून मंत्री दिनेश गोस्वामी की अध्यक्षता में सांसदों एवं विशेषज्ञों की एक समिति गठित हुई। मई 1990 में इस समिति ने अपनी रिपोर्ट सौंप दी। इस रिपोर्ट में दी गयी सिफारिशों को लागू करने के लिए संसद में चार बिल पेश किया गया।[10] लेकिन इन बिलों को कानूनी रूप देने से पहले ही सरकार को 7 नवम्बर 1990 को इस्तीफा देना पड़ा। इस दिशा में नरसिंह राव सरकार द्वारा आगे कोशिश की गई, लेकिन सकारात्मक सफलता न मिल सकी। संयुक्त मोर्चा गठबन्धन सरकार ने जनता को दिये गए वायदे को आंशिक रूप से पूरा करने में उस समय सफल हुई जब उसने 25 जुलाई 1996 को जनप्रतिनिधि कानून (दूसरा संशोधन) को संसद में सर्वसम्मति से पारित करवाया। उसके प्राविधान निम्नवत है–

1. किसी भी प्रत्याशी को एक ही समय दो या दो से अधिक सीटों से चुनाव लड़ने की इजाजत नहीं होगी।
2. उम्मीदवारों को जो मुकाबले के प्रति गंभीर नही है, संसदीय एवं विधान सभा चुनावों के मुकाबलों से हटा दिया जाएगा। यह कार्य जमानत राशि में दस गुणा वृद्धि कर के किया जायेगा।
3. मान्यता प्राप्त राजनीतिक दलों के किसी प्रत्याशी की मृत्यु होने पर चुनाव रद्द नहीं किया जाएगा और सात दिन के अन्दर पार्टी को दूसरा प्रत्याशी नामजद करने का अधिकार होगा। निर्दलीय उम्मीदवारों को यह सुविधा उपलब्ध नहीं होगी।
4. प्रचार का समय 21 दिनों से घटाकर 14 दिन कर दिया जायेगा।
5. मतदान पत्र में प्रत्याशियों के नामों को सूचीबद्ध करने में मान्यता प्राप्त राजनीतिक दलों के उम्मीदवारों को प्राथमिकता दी जाएगी। क्षेत्रीय एवं अन्य पंजीकृत पार्टियों के लिए वही व्यवस्था होगी। निर्दलीय उम्मीदवारों का नाम सूची के अंत में होगा।
6. लोक सभा के चुनाव क्षेत्रों का पुनः सीमांकन 1991 की जनगणना की रिपोर्ट के आधार पर किया जायेगा।
7. चुनावी कार्यो के कार्यभार सौंपे गए अधिकारियों के द्वारा सरकारी दायित्व की अवहेलना करने पर जनपर जुर्माना किया जायेगा।

भारत में लोकतान्त्रिक प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिए स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव के रास्ते की बाधाओं को दूर करने और नैतिक राजनीति स्थापित करने के लिए चुनावी सुधार पर व्यापक कानून की जरूरत है। चुनाव आयोग का बहुसदस्यीय बनना एक अच्छा कदम है धन बल, एवं बाहुबल के प्रभाव को रोकना एक बड़ी चुनौती है। चुनाव आयोग के दो कदमों ने चुनाव सुधार की बहस को गरम किया है।

1. राजनीतिक पार्टियों को मिलने वाले नकद चंदे की सीमा 20000रू0 से घटाकर 2000रू0 की सिफारिश करना।
2. चुनाव आयोग ने आयकर विभाग को ऐसे 250 राजनीतिक दलों के बैंक एकाउन्ट की जाँच करने के लिए पत्र लिखा है जिन्होंने साल 2005 के बाद से काई चुनाव नहीं लड़ा है जबकि लगातार वे धन

उगाहते रहे और टैक्स का लाभ लेते रहे है।[11] इसलिए नकद चंदे की सीमा 2000रू0 करने से पार दर्शिता आयेगी 2010 में चुनाव आयोग ने चुनावों में कालेधन के खिलाफ जंग की घोषणा करते हुए एक पहल शुरू की और तमाम चुनावी खर्चो पर नजर रखने वाले एक निगरानी विभाग की स्थापना की। अप्रैल/मई 2019 में सत्रहवीं लोक सभा का चुनाव होने जा रहा है इसमे कई गठबंधन बन रहे है। राष्ट्रीय स्तर पर दो ही मुख्य राष्ट्रीय दल है भारतीय जनता पार्टी की सरकार है एवं भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस उसके सामने है घोषणा पत्रों के माध्यम से जनता के समक्ष इनके द्वारा अपनी–अपनी बाते प्रस्तुत की जा रही है जनता का निर्णय क्या होगा ये आने वाला भविष्य तय करेगा। धनवान के प्रभाव को रोकना होगा। अब वक्त आ गया है कि सरकार, सभी राजनीतिक दल चुनाव सुधार की दिशा में ठोस पहल के लिए एक जुटता दिखायें। यह नहीं भूलना चाहिए दुनिया में भारत की प्रतिष्ठा सिर्फ इसलिए नहीं है कि यह सबसे बड़ा लोकतंत्र है, बल्कि यह सबसे जीवंत भी है, चुनाव सुधार निश्चय ही इस लोकतंत्र को महान बना सकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *डॉ0 सुभाष कश्यप, विष्णु प्रकाश गुप्त, ''भारतीय राजनीति, सिद्धान्त, समस्याएँ और सुधार'' राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली पृ. 83*
2. *वही पृ0. 84*
3. *डबलू.जे.एम0 मैकेंजी, फ्री इलेक्संस, लंदन जार्ज एलेन एंड अविन। 1958 पृ. 14*
4. *नॉर्मन डी. पामर, इलेक्संस ऐंड पोलिटिकल डेवलपमेंटः द साउथ एशियन एक्सपेरियंस, नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0, 1976 पृष्ठ 173*
5. *डबलू.एच.मॉरिसन्जॉन्स, ''इंडिया इलेक्ट्स फॉर चेंज एंड स्थेबिलिटी'' एशियन सर्वे, खण्ड XI, अगस्त 1971, पृष्ठ 737*
6. *डॉ0 सुभाष कश्यप, विष्णु प्रकाश गुप्त, ''भारतीय राजनीति, सिद्धान्त, समस्याएँ और सुधार'' राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली पृ. 86*
7. *रामकृष्ण हेगडे, इलेक्टोरल रिफार्मः लैक ऑफ पोलिटिकल बिल, बंगलौर, कर्नाटक स्टेट जनता पार्टी, 1987, पृ.24*
8. *रामकृष्ण हेगडे, इलेक्टोरल रिफार्मः लैक ऑफ पोलिटिकल बिल, बंगलौर, कर्नाटक स्टेट जनता पार्टी, 1987, पृ. 24–25*
9. *एस.एल.शकधर, 'इलेक्टोरल रिफॉमस्' जनरल ऑफ कान्स्टीच्यूसनल एण्ड पार्लियामेन्टरी स्टडीज (जे.सी. पी.एस.) खंड XVIII, नं. 1, 2 जनवरी–जून 1984 पृ. 1–11 को देखे।*
10. *जे.टी.गुहाराय, ''इलेक्टोरल रिफॉर्मस्'' थीम पेपर फॉर द थर्टीएट्थ एनुअल कान्फ्रेंस, आई.आई.पीए. नई दिल्ली 1994, पृ.13*
11. *चुनाव सुधार का माकूलवक्त, एस.वाई. कुरैशी दैनिक हिन्दुस्तान 24 दिसम्बर 2016, पृ.10*